International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

समर्पण शब्द का अर्थ और उसकी व्युत्पति

Dr. Sarla Jangir

Assistant professor, Hindusthan College of arts and science

भावार्थ:

भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने में है, फल में नहीं; इसलिए तुम कर्म में समर्पित हो जाओ और उसके फल की चिंता मत करो |

मूलशब्द: व्याकरण—संधिरहित मूलशब्द—व्युत्पत्ति—हिन्दी अर्थ

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि।।"

दा—भ्वा॰ पर॰- < यच्छति>, < दत्त>———-——देना, स्वीकार करना |

"अर्पण" शब्द की व्युत्पत्ति (व्याकरणिक संरचना):

"अर्पण" संस्कृत भाषा का शब्द है, जो धातु 'अर्प्' से बना है।

व्युत्पत्ति प्रक्रिया:

अर्प् (धातु) ⟶ जिसका अर्थ होता है "समर्पण करना" या "भेंट करना"।

अर्प् + ल्युट् (णिच् प्रत्यय) ⟶ अर्पण (भाववाचक संज्ञा)।

'अर्पण' शब्द से ही 'समर्पण' शब्द बना है।

'समर्पण' दो शब्दों का योग है:- 'सम' और 'अर्पण'।

'सम' उपसर्ग का अर्थ है- साथ, समान, पूर्ण, उचित, संपूर्ण या समकक्ष' और 'अर्पण' का अर्थ है- 'भेंट देना' या 'सौंपना'। इस प्रकार, समर्पण का शाब्दिक अर्थ- सौंपना,देना,भेंट या नज़र करना, आत्मसमर्पण, अर्पण, दूसरे को समर्पित,प्रस्तुत करना, समर्पित करना,देना,अर्पण करने की क्रिया |

समर्पण का भावार्थ- अपने मन की इच्छाओं, आकांक्षाओं और भावनाओं को किसी उच्च शक्ति या उद्देश्य के प्रति अर्पित करना |

समर्पण का व्यापक रूप में अर्थ है - आत्म-त्याग और निस्वार्थ भाव से किसी उच्च उद्देश्य या ईश्वरीय शक्ति के प्रति अपने को अर्पित करना। यह एक गहरी आध्यात्मिक और नैतिक प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति अपने अहंकार, इच्छाओं और आसक्तियों को छोड़कर, अपने कार्यों और विचारों को एक समर्पित भावना के साथ करता है।

समर्पण की भावना में एक गहरी श्रद्धा और आत्म-त्याग की भावना निहित होती है, जो कि केवल किसी वस्तु या व्यक्ति को अर्पित करने से कहीं अधिक है। यह एक आध्यात्मिक या भावनात्मक प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति अपने स्वार्थों को छोड़कर किसी महान उद्देश्य के प्रति अपने

आप को समर्पित करता है |

"निर्ममो निरहंकारो निर्मोहो निर्दयो निर्लोभः।
निराशीरपरिग्रहः शुचिर्मौनी निराकुलः॥"

अष्टावक्र गीता (अध्याय 17, श्लोक 19)

अर्थ- जो ममता (अधिकार का भाव) से रहित हो, अहंकार से मुक्त हो, मोह (भ्रम) से परे हो, दयाहीन (संलग्नता रहित) हो, लोभ से मुक्त हो, जिसे किसी प्रकार की आशा न हो, जो परिग्रह (संचय) से रहित हो, जो शुद्ध हो, मौन (आत्मसाक्षात्कार में स्थित) हो और आकुलता (चिंता) से मुक्त हो – वही सच्चे अर्थों में सच्चे समर्पण का प्रतीक है |

समर्पण के प्रकार-

1. माता- पिता के प्रति समर्पण

मनुष्य का जन्म,उसका विकास और उसके अस्तित्व की कहानी उसके माता- पिता के साथ शुरू होती है | माता -पिता ही एक मनुष्य के बाल रूप (शैशव-काल) और किशोरावस्था में उसके नाम, संस्कार, पालन- पोषण और सभी भौतिक आवश्यकताओं के आधार होते हैं | उन्हीं माता- पिता को अपना जीवन समर्पित कर देना, उनमें ही उस परम- पिता ईश्वर को देखना - यह अपने आप में ही महानतम उपलब्धि है | श्रवण कुमार और संत पुंडलिक का नाम इस दृष्टि से अति उत्तम उदाहरण है|

श्रवण कुमार ने अपने माता-पिता को एक विशेष पालकी (कांवड़) में बिठाया और उस पालकी को कंधों पर रखकर पैदल ही तीर्थयात्रा पर निकल पड़े।

वह घने जंगलों, कठिन रास्तों और कष्टकारी परिस्थितियों में भी बिना रुके अपनी माता-पिता की सेवा में लगे रहे।

उन्होंने अपने माता-पिता के सुख-दुःख को अपना जीवन बना लिया और उनकी हर इच्छा पूरी करने के लिए प्रयासरत रहे।

संत पुंडलीक वारकरी संप्रदाय के पहले संत माने जाते हैं,उनका जन्म महाराष्ट्र के पंढरपुर क्षेत्र में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था।

उनका प्रारंभिक जीवन सांसारिक सुखों और विलासिता में व्यतीत हो रहा था।

आरम्भ में माता-पिता के प्रति लापरवाह थे और उनके साथ दुर्व्यवहार करते थे।

एक दिन संत पुंडलीक ने देखा कि ऋषि कुंडलिक और उनकी पत्नी माता-पिता की सेवा कर रहे थे।

इससे वे बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने माता-पिता की सेवा को ही सबसे बड़ा धर्म माना।

उन्होंने अपने माता-पिता की निःस्वार्थ सेवा करनी शुरू कर दी और उनकी देखभाल को ही अपने जीवन का उद्देश्य बना लिया। माता-पिता की सेवा से प्रसन्न होकर भगवान श्रीकृष्ण (विठोबा) पुंडलीक के घर पधारे।

लेकिन उस समय पुंडलीक अपने माता-पिता की सेवा में व्यस्त थे।

उन्होंने भगवान से कहा, "हे प्रभु! कृपया प्रतीक्षा करें, पहले मैं अपने माता-पिता की सेवा कर लूँ।"

पुंडलीक ने भगवान को एक ईंट (वीट) पर खड़े होने के लिए कहा और फिर माता-पिता की सेवा पूरी करने के बाद भगवान की पूजा की।

भगवान श्रीकृष्ण (विठोबा) पुंडलीक की सेवा भावना और भक्ति से इतने प्रसन्न हुए कि वे उस ईंट पर ही खड़े हो गए।

तभी से भगवान विठोबा की खड़े हुए मूर्ति पंढरपुर में प्रतिष्ठित हुई।

यह वही स्थान है जहाँ आज पंढरपुर विठोबा मंदिर स्थित है, जो लाखों भक्तों की आस्था का केंद्र है। ऐसे ही संकेत हिंदू धर्म में सिद्धिविनायक गणेश जी के बारे में मिलते हैं ।जब एक प्रतियोगिता के दौरान उन्हें और कार्तिकेय जी को ब्रह्मांड का चक्कर लगाने के लिए कहा गया, उन्होंने

अपनी माता-पिता की परिक्रमा शुरू कर दी। क्योंकि गणेश जी ने माता-पिता को ही अपना सर्वस्व माना। किसी भी प्राणी का जन्म उसके सृजन कर्ता /माता-पिता द्वारा ही संभव है ।उसे सृजनी की सेवा करना उनके बच्चों का कर्तव्य है,जो हर प्राणी अपने स्तर के अनुसार प्रयास भी करता है। ईश्वर तो सगुण और निर्गुण रूप में इस जगत में उपस्थित होते हैं ,पर माता-पिता जो पालक पोषक, जन्मदाता, गुरु, रक्षक हैं। उनके इस कारण को उनकी संतानों के द्वारा करतार रूप में मान लेना यह दृष्टि अपने आप में बेमिसाल है। यह संतान का कर्तव्य नहीं, बल्कि समर्पण है।

2. गुरु के प्रति समर्पण

"ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥ "
वृहदारण्यक उपनिषद
इस पूर्णता का एहसास बिना गुरु के संभव नहीं है । गुरु पर जितना भी कहा जाए वह कम ही होगा ।
भारतीय संस्कृति में गुरु को बहुत ऊँचा स्थान दिया गया है।गुरु को साक्षात् ईश्वर के तुल्य माना जाता है क्योंकि वही शिष्य को अज्ञान से ज्ञान की ओर ले जाते हैं।हिंदू धर्म में गुरु को ज्ञान, भक्ति और मोक्ष का मार्गदर्शक माना गया है। गुरु-शिष्य परंपरा अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। गौतम बुद्ध ने भी अपने अनुयायियों को स्वयं अनुभव करने और मार्गदर्शन लेने की प्रेरणा दी। सिखों के लिए गुरु विशेष महत्व रखते हैं। दस गुरु और "गुरु ग्रंथ साहिब" को मार्गदर्शक माना जाता है। जैन मुनि और आचार्य गुरु के रूप में पूजनीय होते हैं, जो शिष्यों को मोक्ष का मार्ग दिखाते हैं।ईसाई धर्म में भी आध्यात्मिक गुरु या मार्गदर्शक की अवधारणा है, जिन्हें उस्ताद या पादरी के रूप में जाना जाता है।आज के युग में गुरु केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि शिक्षण संस्थानों, कला, विज्ञान और जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी होते हैं। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में शिक्षक को गुरु का स्थान उच्च माना है ।एक सच्चा गुरु वही होता है जो न केवल ज्ञान देता है बल्कि चरित्र निर्माण भी करता है।

"गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णुः गुरु देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥"

अर्थ:

गुरु ही ब्रह्मा हैं (जो हमें ज्ञान का सृजन करते हैं)।

गुरु ही विष्णु हैं (जो हमें जीवन का पालन-पोषण करना सिखाते हैं)।

गुरु ही महेश्वर (शिव) हैं (जो हमारे अज्ञान का नाश करते हैं)।

गुरु ही साक्षात् परब्रह्म हैं (जो हमें मोक्ष का मार्ग दिखाते हैं)।

ऐसे मन गुरु को नमन।

स्वामी विवेकानंद का अपने गुरु श्री रामकृष्ण परमहंस के प्रति समर्पण अतुलनीय था। वे केवल एक शिष्य नहीं, बल्कि अपने गुरु के विचारों के प्रचारक और उनकी शिक्षाओं के जीवंत उदाहरण भी थे।

जब श्री रामकृष्ण परमहंस बीमार हुए, तो स्वामी विवेकानंद ने उनकी सेवा में दिन-रात समर्पित होकर उनकी देखभाल की।

जब गुरु ने विवेकानंद को दिव्य अनुभव प्रदान किया, तो वे पूरी तरह गुरु के आदेशानुसार जीने लगे।

रामकृष्ण के विचारों को दुनिया भर में फैलाना – स्वामी विवेकानंद का पूरा जीवन अपने गुरु के संदेश को समर्पित रहा।

3. 'देश के प्रति समर्पण'

बूंदेले हरबोलों के मुंह हमने सुनी कहानी थी,

खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी,
सुभट सरिस वह समरभूमि में
शीश कटाने आई थी,
समर्पण की ऐसी ज्वाला रण में जलने आई थी|"

"राष्ट्रहित ही मुख्य हो" देश के प्रति समर्पण हर उस मनुष्य का है, जिन्होंने अपने देश को आज़ाद करने के लिए अपने प्राणों की आहुति दी |उनके इस त्याग , बलिदान और समर्पण के कारण ही आज हम सब स्वतंत्र है | देश के प्रति समर्पण में मै अगर कुछ विशेष नाम लिखती हूँ, तो यह मेरा कृत्य उचित नहीं होगा |

किसी राष्ट्र की उन्नति और विकास तभी संभव है जब उसके नागरिक अपने व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर उठकर देश के हित को सर्वोपरि मानें। "राष्ट्रहित ही मुख्य हो" यह विचार हर नागरिक अपने जीवन में उतारे, तो राष्ट्र अभूतपूर्व ऊँचाइयों तक पहुँच सकता है।

देश सशक्त, आत्मनिर्भर और सुरक्षित रहेगा, तो नागरिकों का जीवन भी सुखद और सुरक्षित होगा।

जब हर नागरिक देशहित को सर्वोपरि रखेगा, तो जाति, धर्म, भाषा और क्षेत्रीय भेदभाव समाप्त होंगे और राष्ट्र मजबूत बनेगा। देश का विकास तभी संभव है जब लोग राष्ट्र के आर्थिक सशक्तिकरण में योगदान दें, स्वदेशी वस्तुओं को अपनाएँ और ईमानदारी से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करें। राष्ट्रहित को सर्वोपरि मानने से लोग अनुशासित रहेंगे और समाज में ईमानदारी, नैतिकता और कानून का पालन करने की प्रवृत्ति बढ़ेगी। युवा राष्ट्रहित को प्राथमिकता देंगे, तो वे सही दिशा में आगे बढ़ेंगे और देश के विकास में अपनी भूमिका निभाएँगे। हर नागरिक को अपने कार्य को पूरी निष्ठा और ईमानदारी से करना चाहिए।आतंकवाद, भ्रष्टाचार, अराजकता और विभाजनकारी प्रवृत्तियों से देश को बचाना हर नागरिक की जिम्मेदारी है। स्थानीय उत्पादों को अपनाएँ, रोजगार सृजन में योगदान दें और राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को मजबूत करें।नई तकनीकों और वैज्ञानिक सोच को अपनाकर देश को आगे बढ़ाने में योगदान देश के नियमों का पालन करें और एक आदर्श नागरिक बनें।

गुप्त की कविता 'त्याग' कविता में भी एक मनुष्य के सच्चे मानव धर्म को अपनाने से कैसे उस देश की धरती भी धन्य हो जाती है - यह दर्शाया गया है |

"परहित सरिस धर्म नहि भाई,
समर्पण से ही सृजन की छाई,
जब-जब मानव त्याग करेगा
तब- तब धरती धन्य रहेगा |"

4. कर्म के प्रति समर्पण

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मण:।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मण:॥

(भगवद्गीता – अध्याय 3, श्लोक 8)

अर्थ: तुम अपने कर्तव्य रूप कर्म का पालन करो, क्योंकि कर्म अकर्म (निष्क्रियता) से श्रेष्ठ है। यदि तुम कर्म नहीं करोगे, तो तुम्हारा शरीर भी सही रूप से नहीं चल पाएगा। कर्म करना अनिवार्य है, क्योंकि बिना कर्म के जीवन संभव नहीं है। निष्क्रियता से व्यक्ति का विकास रुक जाता है।

मनुष्य के जीवन में कर्म का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। कर्म ही उसकी पहचान, प्रगति और सफलता का आधार होता है। जब कोई व्यक्ति अपने कार्य को पूरी निष्ठा, ईमानदारी और समर्पण के साथ करता है, तो उसे न केवल आत्मसंतोष प्राप्त होता है, बल्कि समाज और राष्ट्र की उन्नति

में भी उसका योगदान महत्वपूर्ण बनता है।

कर्म के प्रति समर्पण का अर्थ है—अपने कार्य को पूरी लगन, ईमानदारी और निस्वार्थ भावना से करना। यह समर्पण केवल व्यक्तिगत लाभ के लिए नहीं, बल्कि समाज, देश और मानवता के उत्थान के लिए भी होना चाहिए। जो व्यक्ति अपने कर्म के प्रति समर्पित रहता है, वह जीवन में अवश्य सफल होता है।

जब हम पूरे मन से अपना कार्य करते हैं, तो हमें आत्मसंतुष्टि मिलती है | कर्मयोगी व्यक्ति अपने कार्यों से समाज और देश की प्रगति में योगदान देता है। समर्पण भाव से किया गया कर्म व्यक्ति को मानसिक रूप से मजबूत बनाता है।जो लोग अपने कर्म के प्रति समर्पित होते हैं, वे दूसरों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनते हैं।

अर्थात्, मनुष्य को केवल अपने कर्म करने का अधिकार है, फल की चिंता नहीं करनी चाहिए। यदि हम अपने कार्य को पूरी निष्ठा से करेंगे, तो फल अपने आप मिलेगा।

हर कार्य को महत्वपूर्ण समझें और उसे मन से करें। कोई भी बड़ा कार्य एक दिन में पूरा नहीं होता, धैर्य और निरंतर प्रयास आवश्यक हैं। अपने कार्य में सत्यनिष्ठा और ईमानदारी बनाए रखें। कर्म को केवल व्यक्तिगत लाभ के लिए नहीं, बल्कि दूसरों के कल्याण के लिए भी करें।

कर्म के प्रति समर्पण ही सच्ची सफलता की कुंजी है। जब हम निष्ठा और लगन से अपने कार्य में जुट जाते हैं, तो जीवन में हर लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। कर्मयोग ही जीवन का सच्चा पथ है, जो न केवल व्यक्तिगत उन्नति, बल्कि समाज और राष्ट्र की प्रगति में भी सहायक होता है। हिंदी साहित्य के सूर्य रामधारी सिंह दिनकर जी रश्मिरथी के नायक कर्ण का समर्पण उसका दान बताया है | इसी प्रवृति के कारण ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र को कवच और कुंडल दान में दे दिए, वह यह जानता था कि यह दान देने से वह युद्ध में कमजोर पड़ जाएगा और उसकी हार निश्चित है | गुरु परशुराम के दिए वरदान और अपने दान की प्रवृति के कारण इतिहास में कर्ण का नाम एक योद्धा के रूप में नहीं , बल्कि कर्ण अपनी दानवीरता के कारण प्रसिद्ध हुआ |

‘रश्मिरथी, दानवीर कर्ण हूँ,
समर्पण मेरा धर्म है,
अपने प्राण भी अर्पित कर दूं,
यही मेरा कर्म है|’

5. समाज के प्रति समर्पण

एक व्यक्ति का जीवन केवल उसकी व्यक्तिगत इच्छाओं और जरूरतों तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि उसे समाज के प्रति भी अपना उत्तरदायित्व निभाना चाहिए। समाज के प्रति समर्पित जीवन का अर्थ है—निस्वार्थ भाव से समाज की सेवा करना, लोगों की भलाई के लिए कार्य करना और समाज को एक बेहतर दिशा में ले जाने में योगदान देना। जब व्यक्ति समाज के हित में कार्य करता है, तो समाज में समरसता, एकता और सहयोग की भावना विकसित होती है।जो लोग गरीब, अनपढ़ या किसी भी प्रकार से वंचित हैं, उनकी मदद करना समाज के प्रति सच्चा समर्पण है। अच्छे संस्कार और नैतिक मूल्यों को आगे बढ़ाने से समाज में सद्भावना बनी रहती है। जब व्यक्ति समाज के लिए कार्य करता है, तो शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण और अन्य क्षेत्रों में सुधार होता है। निस्वार्थ सेवा से व्यक्ति को आत्मसंतोष मिलता है, और वह समाज के लिए प्रेरणा स्रोत बनता है। समाज के प्रति समर्पित जीवन केवल समाज की भलाई नहीं करता, बल्कि व्यक्ति को भी आत्मिक संतोष देता है। जब हर नागरिक समाज के उत्थान के लिए समर्पित भाव से कार्य करेगा, तो न केवल समाज, बल्कि पूरा देश प्रगति करेगा।

6. आध्यात्मिक जीवन के प्रति /

ईश्वर के प्रति समर्पण

"पूर्ण रूप से अर्पित करना, आत्मसमर्पण, नि:स्वार्थ भाव से सौंप देना"।

मानस जिलेसिंह

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

(भगवद्गीता – अध्याय 18, श्लोक 66)

भावार्थ- सभी धर्मों (कर्तव्यों) को त्यागकर केवल मेरी शरण में आओ। मैं तुम्हें सभी पापों से मुक्त कर दूँगा, इसलिए शोक मत करो।यह श्लोक पूर्ण समर्पण का संदेश देता है, जिसमें भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि यदि कोई पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ उनकी शरण में आ जाता है, तो वे उसे समस्त दुखों और पापों से मुक्त कर मोक्ष प्रदान करेंगे। इतिहास और धर्मग्रंथों में कई व्यक्तियों ने ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण किया है। कुछ प्रमुख उदाहरण इस प्रकार हैं:

मध्यकाल के सभी संतों और भक्तों ने अपने जीवन को ईश्वर की भक्ति में पूर्ण रूप से अर्पित कर दिया और अपनी भक्ति के माध्यम से दुनिया को प्रेम, करुणा और सेवा का संदेश दिया। भक्त मीरांबाई ने श्री कृष्ण को अपना पति मानकर उनकी आराधना की | जिसके कारण उन्हें अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा | समाज द्वारा दी गई तकलीफों के आगे उनका समर्पण बड़ा था | इसलिए उनका नाम आज संसार में प्रसिद्ध है |

" पायोजी मैंने राम रतन धन पायो
वास्तु अमोलिक दी मेरे सतगुरु
कृपा कर अपनायो|'

अज्ञेय की कविता असाध्य वीणा में भी प्रियवंद ने अपना समर्पण उस किरीटी तरु को दिया , तभी जाकर वह वीणा बजी |

"श्रेया नहीं कुछ मेरा,
मैं तो डूब गया था स्वयं शुन्य में
वीणा के माध्यम से
अपने को मैंने
सब कुछ को सौंप दिया था
सुना आपने जो वह मेरा नहीं
न वीणा का था
वह तो सब कुछ की तयता थी
महा शून्य
वह महामौन
अविभाज्य, अनाप्त, द्रवित, अपरिमेय
जो शब्दहीन सब में गाता |"

कबीर का हरि निर्गुण ब्रहम है | कबीर ने समाज के अंधविश्वासों, पाखंड और कुरीतियों पर करारा व्यंग्य किया | उन्होंने मानव प्रेम से ईश्वर प्राप्ति का मार्ग माना और समर्पण को उसकी पूर्णता बताया। उस प्रेम में अहं रूपी अंधकार नहीं होना चाहिए |

"प्रेम गली अति सांकरी, तामें दो न समाय।

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि है मैं नाही।

सब अँधियारा मिट गया, जब दीपक देखा माही।।"

समर्पण की भावना व्यक्ति को आध्यात्मिक उन्नति की ओर ले जाती है। यह व्यक्ति को परमात्मा के प्रति प्रेम और भक्ति की भावना विकसित करने में मदद करती है, जिससे वह आत्मज्ञान की ओर अग्रसर होता है | समर्पण का अभ्यास निस्वार्थता को बढ़ावा देता है। जब व्यक्ति अपनी इच्छाओं और स्वार्थों को छोड़कर दूसरों के कल्याण के लिए कार्य करता है, तो वह समाज में सकारात्मक बदलाव लाने में सक्षम होता है| समर्पण का अभ्यास व्यक्तिगत संबंधों में भी महत्वपूर्ण होता है। यह दूसरों की जरूरतों और भलाई को प्राथमिकता देने की प्रेरणा देता है, जिससे रिश्ते मजबूत होते हैं | समर्पण व्यक्ति को जीवन के उद्देश्य की खोज में मदद करता है। जब व्यक्ति अपनी शक्ति और प्रयासों को एक उच्च लक्ष्य के लिए समर्पित करता है, तो उसे जीवन में अर्थ और संतोष मिलता है |

'सभी कर्मों को भगवान के प्रति अर्पित करना चाहिए|"

भगवद गीता (गीता 9.27)

समर्पण की धारणा भगवान के प्रति आत्मसमर्पण से जुड़ी हुई है| इसे सभी प्राणियों के कल्याण के लिए कार्य करने के रूप में देखा जाता है| निष्कर्ष रूप में समर्पण केवल एक धार्मिक या आध्यात्मिक क्रिया नहीं है, बल्कि यह जीवन जीने का एक तरीका भी है जो हमें नैतिकता, दया और निस्वार्थता की ओर प्रेरित करता है।

यह शब्द परमात्मा से जुड़ने या किसी उद्देश्य के लिए अहंकार, इच्छाओं और आसक्तियों को छोड़ना शामिल है | और साथ ही निस्वार्थ भाव से खुद को ईश्वरीय इच्छा या दूसरों के भले के लिए समर्पित करना शामिल है|

1. झाँसी की रानी, सुभद्राकुमारी चौहान, मुकुल कविता संग्रह
2. रश्मिरथी , रामधारीसिंह दिनकर
3. "असाध्य वीणा" अज्ञेय, कविता संग्रह आँगन के पार- द्वार 1967
4. https://realisticthinker.com/meaning-of-dedication/
5. https://vicharkranti.com/sanskrit-slokas-on-guru/
6. **भगवद्गीता** के **द्वितीय अध्याय (सांख्य योग)** के 47वें श्लोक
7. **"गुरु स्तोत्र"** या **"गुरु गीता"** जो स्कंद पुराण का एक भाग है |
8. "कबीर बीजक" श्री हजारी प्रसाद द्विवेदी